तृतीय अध्याय

‘पदावली’ और ‘कीर्तन-घोषा’ - एक विवेचन

विद्यापति की 'पदावली' और शंकरदेव की 'कीर्तन-घोषा' दोनों ही भारतीय साहित्य की दो अमूल्य कृतियाँ हैं। यहाँ ‘पदावली’ और ‘कीर्तन-घोषा’ की सम्यक जानकारी के लिए कथ्य और शिल्प की दृष्टि से दोनों कृतियों का अध्ययन विवेचन प्रस्तुत किया गया है, जो निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है।

3.1. कथ्य और शिल्प की दृष्टि से ‘पदावली’ का विवेचनः

3.1.1. कथ्य की दृष्टि से ‘पदावली’ का विवेचनः

विद्यापति ने संस्कृत में प्रायः 13 रचनाएँ कीं। 'देसिल बअना सब जन मिथ्या' कहकर जनभाषा मैथिली में समय-समय पर जो पद गाते रहे, उसी का संग्रहीत रूप 'पदावली' के कारण कवि विद्यापति की ख्याति मिथिला से बाहर दूर-दूर तक फैली। जीवनकाल में ही विद्यापति प्रसिद्ध तथा लोकप्रिय बने, जिसका प्रमुख श्रेय उनकी 'पदावली' को जाता हैं। 'गीत-गोविंद' के रचयिता जयदेव से प्रेरित होकर ही जनभाषा मैथिली में विद्यापति ने समय-समय पर पदावली के पदों की रचना की। 'गीत-गोविंद' की तरह ही विद्यापति की पदावली गेय और कोमलकांत होने के कारण वे 'अभिनव जयदेव' और 'मैथिल कोकिल' नामों से प्रसिद्ध हुए। भौगोलिक निकटता के कारण विद्यापति के पद मिथिला के बाद बंगाल तक प्रसरित होकर सभी के लोकप्रिय बन गए। चैतन्य महाप्रभु के प्रभाव से राधा-कृष्ण विषयक पद विद्यापति ने रचे, जिसे काफ़ी प्रसिद्धि मिली। इसी तरह कीर्तनीया वैष्णवों में भी विद्यापति का मान बढ़ा। उन्हें मध्ययुगीन संत महात्माओं की पंक्ति में स्थान दिया गया है।

जहाँ तक विद्यापति की पदावली की संख्या की बात आती है, उसे निश्चित रूप से कहना मुश्किल है। वैसे तो पदावली के पदों का संकलन कार्य अब तक अनेक विद्वानों द्वारा होता आया है। तत्कालीन समय

में भिन्न-भिन्न संस्करण विद्यापति पदावली के रूप में उपलब्ध तो हैं, किंतु इनकी प्रामाणिकता पर सदैव प्रश्नचिह्न ही रहा है। इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि विद्यापति के पदों को ज्यादातर लोग अपनी सम्पत्ति समझकर इसका उपयोग अपने लिए करते रहे हैं। विद्यापति के पदों का संग्रह-जार्ज अब्राहम, जार्ज ग्रियर्सन, चंद्रा झा, नगेंद्रनाथ गुप्त, सुभद्र झा, रामवृक्ष बेनीपुरी, शिवनंदन ठाकुर आदि ने किया है। विद्यापति पदावली के संपादन में कुछ प्राचीन पदावली का आधार विशेष महत्त्व रखता है, जो इस प्रकार है-

- नेपाल पदावली या पाण्डुलिपि
- रामभद्रपुर पदावली या पाण्डुलिपि
- तरौनी पदावली या पाण्डुलिपि
- राग तरंगिनी
- बंगाल की पदावली या पाण्डुलिपि
- लोककंठ में प्रचलित गीत

नेपाल पदावली या पाण्डुलिपि नेपाल दरबार के पुस्तकालय में उपलब्ध है। विद्वानों ने इसे 18 वीं शताब्दी की रचना माना है और इसकी लिपि को प्राचीन मैथिली कहा है। किसी ने मुख्य पृष्ठ पर 'विद्यापति के गीत' नागराक्षर में लिख दिया है, सभी गीत कवि विद्यापति के नहीं हैं। उसमें अन्य कवि के कुछ भी सम्मिलित हैं। सर्वप्रथम नगेन्द्रनाथ गुप्त ने इसका संकलन कर 'विद्यापति पदावली' नाम दिया था। नेपाल पदावली के सर्वप्रथम प्रकाशन का श्रेय डॉ. सुभद्र झा को जाता है। अंग्रेजी टीका और गवेषणात्मक भूमिका के साथ इसका प्रकाशन झा ने किया है। इसमें कुल पदों की संख्या 287 है, जिसमें अन्य कवियों के पद शामिल हैं।

रामभद्रपुर पदावली या पाण्डुलिपि दरभंगा जिले के रामभद्रपुर नामक गाँव में प्राप्त हुई थी। इसकी प्रतिलिपि पटना विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसे 'विद्यापति विशुद्ध पदावली' नाम देकर

पहली बार शिवनंदन ठाकुर ने सन् 1938 ई. में प्रकाशित किया था। खण्डित रूप में मिलने के कारण 96 पदों में से 86 पदों का ही उद्धार ठाकुर द्वारा हो पाया।

तरौणी पदावली या पाण्डुलिपि तालपत्र पर हस्तलिखित पोथी है, जो दरभंगा के तरौणी ग्राम के निवासी लोकनाथ झा के घर में प्राप्त हुई थी। इसी कारणवश इसका नाम तरौणी पाण्डुलिपि दिया गया। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने इसे विद्यापति पदावली नाम से 784 संख्यक पदों में प्रकाशित किया।

मैथिल कवि लोचन कृत राग तरंगिनी में विद्यापति के 51 पद संग्रहित हैं। ये राजा महिनाथ ठाकुर और नरपति ठाकुर के आश्रित कवि रहे हैं। विद्यापति की तरह लोचन भी कवि तथा संगीत मर्मज्ञ थे। इसीलिए राग तरंगिनी में प्राप्त सभी पदों को विशुद्ध, प्रामाणिक और प्राचीन माना जाता है।

विद्यापति के पदों की वैष्णव पदावलियाँ अनेक रूपों में मिलती हैं। इनमे से एक बंगाल में है। विद्यापति के पद अत्यन्त लोकप्रिय हैं। चैतन्य महाप्रभु के कारण विद्यापति के पद अधिक प्रसारित हुए। पदों को कीर्तनोपयोगी बनाने हेतु इनमें परिवर्तन भी किया गया है, जिसके कारण मिथिला और बंगाल में प्राप्त विद्यापति के पदों में समानता काफ़ी हद तक कम है। इनमें राधामोहन ठाकुर का 'पदामृत समुद्र', गोकुलानंद सेन का 'पद कल्पतरु', दीनबंधुदास का 'संकीर्तनामृत' आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त अज्ञात लेखक द्वारा संकलित कीर्तनानंद में विद्यापति की भणिता युक्त 58 पद हैं। कई अप्रकाशित पद संग्रह बंगीय साहित्य परिषद, कलकत्ता विश्वविद्यालय एवं शांति निकेतन आदि में सुरक्षित हैं।

विद्यापति के लोककंठ में प्रचलित पद भी मिलते हैं। मिथिला की प्राचीन संगीत परम्परा के इतिहास में विद्यापति अन्यतम रहे हैं। उनके कारण मैथिली काव्यधारा इस वेग से प्रवाहित हुई कि उसने पूर्वोत्तर भारत को भी आप्लावित कर दिया। लोककंठ में विद्यापति के पद चिरप्रवाहमान रहे हैं। विद्यापति के पदों की संख्या निश्चित रूप में कह पाना कठिन है, कयोंकि पदावलियों की सभी प्रतियाँ खण्डित ही प्राप्त

हुई हैं। प्रायः ज्यादातर पद लोककंठ से ही संग्रहीत हैं। देश, काल और पात्र के प्रभाव के कारण विद्यापति के पदों में एकरूपता नष्ट हो गई है। फिर भी विद्यापति के पदों में माधुर्यपन ज्यों का त्यों बना हुआ है। मिथिला में आज भी पर्व त्योहारों में विद्यापति के पद उमंग के साथ गाये जाते हैं। इनमें-सोहर, मल्हार, बनगमनी, योग, उचिती, पाचारी, महेशबारी आदि भिन्न प्रकार के पद लोककंठ में उपलब्ध हैं। ये पद भाषा, भाव तथा शैली किसी भी दृष्टि से कवि की प्राचीन पदावलियों के पद से कम नहीं हैं। उदाहरणस्वरूपः

मालती । करू परिमल रस दान ।
मोहि न करिअ अपमान ।
मधुमय मालति । मल्लि, बल्लि अरू
कुन्द, कुमुद, अरविंद ।
चंपक परिहरि, तोहि ह्दय धरि
कतहु न पिब मकरंद । (कपूर 1968:20)

विद्यापति के श्रृंगारिक पदों की तुलना में पर्व त्योहारों के पद मिथिला के लोककंठ में उपलब्ध हैं। इनमें सोहर, मल्हार, बतगमनी, योग, उचिती, पाचारी, महेशबानी भिन्न प्रकार के पद हैं।

इस प्रकार ग्रियर्सन के बाद नगेन्द्रनाथ गुप्त ने अपने विद्यापति पदावली में 935 पद प्रकाशित किए। यह ग्रंथ बंगाल से प्रकाशित हुआ। इसी आधार पर कई अन्यान्य लेखकों द्वारा विद्यापति के पद संग्रहित कर प्रकाशित किए गए। शिवनंदन ठाकुर ने रामभद्रपुर पोथी के आधार पर 'विद्यापति विशुद्ध पदावली' प्रकाशित की, जिसमें 86 पद प्रकाशित हुए। गुप्त के बाद सबसे प्रामाणिक खगेन्द्रनाथ मिश्र और विमान बिहारी मजुमदार ने विद्यापति के 939 पद प्रकाशित किए। इसमें गुप्त के 203 पद को छोड़कर 207 नये पद मिश्र-मजुमदार ने जोड़े। संदेहपूर्ण समझकर उन्हें छोड़े गए। वैसे नगेन्द्र नाथ गुप्त मान्य 935 पदों के साथ यदि मिश्र-मजुमदार के 207 नए पद जोड़े गए तो इसकी संख्या 1142 होती है। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद

पटना द्वारा 'विद्यापति पदावली' के प्रकाशन की योजना एक सफल तथा उल्लेखनीय कार्य है, जिनमें दो खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इस आधार पर अब तक पदावली की संख्या लगभग 1142 मानी जा सकती है।

संस्कारी ब्राह्मण वंश में जन्मग्रहण करनेवाले विद्यापति दरबारी कवि थे। दरबारी वातावरण में रहने के बावजूद विद्यापति लोकजीवन की स्थितियों से अवश्य ही अछूते नहीं रहे थे। युगप्रेरित संघर्षों और परस्पर विरोधी मान्यताओं के कारण विद्यापति के व्यक्तित्व में भी परस्पर विरोधी भावनाओं का एकत्रिकरण मिलता है। विद्यापति की पदावली के अध्ययन करने पर यह दृष्टिगोचर होता है कि – एक ओर वे शृंगार का उद्दाम चित्रण करते हैं, जिसमें दरबारी संस्कृति उभरकर आती है तो दूसरी ओर लोकजीवन। फिर एक ओर उनकी कविता में भक्ति का प्रवाह है। वे दुर्गा स्तुति करते हैं, शिव स्तुति, शिव की नचारियाँ गाते हैं, जिसे पढ़कर पाठक आश्चर्यचकित रह जाते है। कथ्य अथवा विषय की दृष्टि से विद्यापति की पदावली में एकसूत्रता नहीं है, क्योंकि विद्यापति की पदावली मुक्तक रचना है। आलोचना की सुविधा के लिए पदावली के पदों के कथ्य या विषय को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

3.1.1.1. भक्ति विषयक

3.1.1.2. शृंगार विषयक

3.1.1.3. विविध विषयक

3.1.1.1. भक्ति विषयकः

पदावली के भक्ति विषयक पदों के अंतर्गत अनेक देव-देवियों की स्तुति, वंदना तथा नचारियाँ आदि आती हैं। आनंदप्रकाश दीक्षित के अनुसार-

> भक्ति के क्षेत्र में विद्यापति किसी भी सम्प्रदाय से नहीं जुड़ते। कृष्ण, शिव, शक्ति, गंगा आदि सभी के प्रति विनय और आत्मनिवेदन करते हैं। भक्ति के लिए जिस वैराग्य, संसार के प्रति क्षणभंगुरता की दृष्टि, दीनता और हीनता की अपेक्षा होती है, वह रूप विद्यापति में विद्यमान है। (दीक्षितः 61)

कृष्ण की स्तुति करते हुए विद्यापति की दीन दशा का चित्रण प्रस्तुत पद में द्रष्टव्य है-

माधव, बहुत मिनति कर तोय।

दए तुलसी-तिल देह समर्पिनु,

दय जनि छाड़िब मोय।

गनइत दोसर गुन लेस न पाओबि,

जब तुहुँ करबि बिचार।

तुहू जगत जगनाथ कहाओसि,

जग बाहिर नइ छार।। (कपूर 1968:415)

यहाँ बार-बार विद्यापति विनयपूर्वक भगवान की प्रार्थना कर भगवान के भक्तवत्सल स्वरूप का वर्णन करते हुए अपने उद्धार की प्रार्थना करते हैं। यह पद भगवान के प्रति कवि की अनन्य भक्ति और दैन्यता-पूर्ण हृदयोद्गार का साक्षी है।

अन्य एक पद में भक्त कवि संसार की क्षणभंगुरता, नश्वरता का ज्ञान पाकर जीवन की अवसान बेला में पश्चाताप करते हुए दिखाई देते हैं और माधव की कृपा-दृष्टि पाने के लिए कातर प्रार्थना करते हुए निम्नलिखित पद में अपनी दशा का वर्णन इस प्रकार किया है-

आध जनम हम नींद गमायलुँ

जरा सिसु कत दिन गेला।।

निधुवन रमनि रंग रसे मातलुँ,

तोहि भजब कोन बेला।। (बेनीपुरी 2011:156)

कृष्ण स्तुति के साथ इसी प्रकार अर्द्धनारीश्वर के रूप में शिव का अत्यंत मनमोहक वर्णन करते हुए विद्यापति एक पद में गाते हैं-

जय जय संकर, जय त्रिपुरारि। दय अध पुरूष जयति अध नारि।।

आध धबल तनु आधा गोरा। आध सहज कुच आध कटेरा।।

आध हड़माल आध गजमोति। आध चानन सोह आध बिभूति।।

आध चेतन मति आध भोरा। आध पटोर आध मुँजडोरा।।

आध जोग आध भोग बिलासा। आध पिधान आध दिक-बासा।।

आध चान आध सिंदुर सोभा। आध विरूप आध जग लोभा।।

भने कविरतन बिधाता जाने। दुई कए कए बाँटल एक पराने।। (बेनीपुरी 2011:150)

यहाँ देवाधिदेव शंकर का अर्द्धनारीश्वर रूप में वर्णन कर अत्यंत सजीव चित्रण कर विद्यापति शिव की वंदना करते हैं। विद्यापति ने प्रस्तुत पद के माध्यम से योग और भोग का समन्वय शिवत्व में दर्शन किया है। इसी प्रकार 'कनक भूधर शिखर वासिनी' पद में आदि शक्ति दुर्गा की वंदना कर कवि ने आदिशक्ति दुर्गा में ब्रह्मा, विष्णु, महेश के त्रिगुणात्मक स्वरूप की कल्पना की है। उसीप्रकार 'षड़ सुख-सार पाओल तुअ तीरे' पद में गंगा की स्तुति कर सारे पापों का नाश करनेवाली बताया है। फिर उन्होंने 'रे नरनाह। सतत भजु ताहि ताहि' ऐसे कहकर जानकी वंदना भी की है। विद्यापति के भक्ति विषयक पदों में नचारियाँ भी शामिल हैं। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

एहि बिधि चलला बिआहए, मोर बाउर जोगी।

टपर-टपर कए बसहा आयल, खटर खटर रूँडमाल।।

भकर भकर सिब भाँग भकोसथि, डमरू लेल कर लाय।।

ऐपन मेटल पुरहर फोरल,फेकल चौमुख दीप।।

धिया लय मनाइनि मंडप पइसलि, गाबिए जनु सखि गीत।।

भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि, ई थिका त्रिभुवन-ईस। (बेनीपुरी 2011:153)

कवि ने इस पद में शिव के विचित्र वेश में गौरी को विवाह कराने आने का वर्णन किया है। खटपट करता बावला नंदी का आना, स्वयं शिव के गले में पड़ी मुण्डमाला का खटर-खटर करना, हाथ में डमरू

लिए शिव का भकर-भकर भांग चबाना आदि से विचित्र दुल्हे का रूप वर्णन किया है। साथ ही मिथिला में प्रचलित विवाह के अवसर की कुछ प्रथाओं का भी पद में उल्लेख मिलता हैं। जैसे विवाह मण्डप में मिट्टी के कलश का स्थापन, मण्डप में चतुर्मुख द्वीप प्रज्जलन तथा विवाह में स्त्रियों द्वारा पिसे चावल से सुंदर चित्रकारी करना आदि।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि विद्यापति की पदावली में जो भक्ति विषयक पद हैं, वे अन्यान्य देव-देवियों की वंदना, स्तुति, प्रार्थना तथा नचारियाँ आदि के रूप में हैं।

3.1.1.2. शृंगार विषयकः

विद्यापति राजकवि तथा राजसभासद थे। राजदरबार के विलासितापूर्ण वातावरण में श्रृंगारिक पदों की ही मांग होने के कारण विद्यापति ने शृंगार रस के सर्वांगपूर्ण स्थितियों का वर्णन कर पद लिखे। शृंगार के अमर गायक कवि विद्यापति ने शृंगार के सभी स्थितियों, पक्षों का वर्णन अपनी पदावली में किया है। पदावली में नायक-नायिका के रूप में विद्यापति ने राधा-कृष्ण को ही चुना। किंतु कवि ने राधा-कृष्ण को साधारण नायक-नायिका की तरह ही मानकर स्वतंत्र रूप में पूरी इमानदारी और तन्मयता के साथ शृंगार रस का चित्रण किया। शृंगार के विशद व्यंजना हेतु, रूप वर्णन, नख-शिख, नायिका भेद, वयःसंधि, सद्यस्नाता के लिए प्रथम दर्शन, प्रेमोत्कंठा, मिलन, मान, विदग्ध, विलास के साथ वियोग की भी सभी स्थितियों का पूर्णरूपेण चित्रण किया है। शृंगार के शिरोमणि कवि विद्यापति ने शृंगार के संयोग और वियोग उभय पक्षों का अपूर्व चित्रण पदावली में किया है। जब वे संयोग शृंगार की ओर बढ़े, तो सभी स्थितियों का उद्दाम चित्रण किया और अगर वियोग शृंगार की ओर बढ़े तो उतनी ही मार्मिकता बोध के साथ। संयोग शृंगार में रूप वर्णन प्रधान होता है। इसमें नख-शिख, वेश-भूषा, आकृति-प्रकृति, सुकुमारता आदि का वर्णन होता है। इस प्रकार के चित्रण में विद्यापति का अनुपम कौशल एक पद के माध्यम से भलिभाँति देखा जा सकता है, जो इस प्रकार है-

माधब की कहब सुंदरि रूपे।

कतन जतने बिहि आनि समारल, देखल नयन स्वरूपे।।

पल्लवराज चरण-जुग सोभित, गति गजराजक भाने।

कनक कदलि पर सिंह समारल, तापर मेरू समाने।।

मेरू उपर दूइ कमल फुलाएल, नाल बिना रूचि पाई।।

मनि-मय हार धार बहु सुरसरि, तओ नहिं कमल सुखाई।।

अधर बिम्ब सन्, दसन् दाड़िम - बिजु, रवि ससि उगथिक पासे।

राह दूर बस नियर न आबथि, तें नहिं करथि गरासे।।

सारँग नयन बयन पुनि सारँग सारँग तसु समधाने।

सारँग उपर उगल दस सारँग, केलि करथि मधुपाने।। (बेनीपुरी 2011:41)

प्रस्तुत पद में कवि नायिका राधा के विविध शरीरावयवों, जैसे- तरण, गति, जंघाओं, कटि, वक्षस्थल, कुच, हार, अधर, दसन्, केश, नेत्र, वचन आदि के लिए क्रमानुसार कमल, ऐरावत, कदली, सिंह, सुमेरू पर्वत, कमल, गंगा, बिम्बफल, दाड़िम बीज(अनार), राहु, हिरण, कोयल, चंद्रमा तथा भ्रमर के उपमानों का प्रयोग कर चमत्कारपूर्ण रूप से राधा के अपरूप सौंदर्य का वर्णन करते हैं।

विद्यापति ने नायिकाओं के भिन्न भेदों का पदावली में चित्रण किया है। जाति, प्रकृति, धर्म, गुण, वय तथा परिस्थिति अनुसार नायिकाओं को मुग्धा, नवौढ़ा, स्वाधीन पतिका, मानिनी, हस्तिनी, परकीया, वासकसज्जा, दिवाभिसारिका, शुक्लाभिसारिका, खण्डिता आदि रूपों में चित्रित किया है। उसीप्रकार पदावली में चित्रित नायक कृष्ण को भी धीर, ललित, चतुर, कोमल स्वभाव, शठ, कामिनी प्रेमी, सुषमा सम्पन्न तथा नृत्य, गीत में निपुण रूपों में दर्शन करवाया है।

मुग्धा नायिका राधा शैशव की अवस्था पार कर यौवन में प्रविष्ट हो रही है। वयःसंधि के इस स्थिति को अत्यन्त सुक्ष्म निरीक्षणकर्ता के रूप में कवि विद्यापति ने 'सैसव, जौवन दरसन् भेल, दुहु दल बलहि दंद परि गेल' पद में दिखाया हैं। शैशव के बाद युवावस्था प्राप्त नायिका का चित्र कवि स्वाभाविक

और सजीव रूप से 'गेलि कामिनि गजइ गामिनि' में करते हैं। वे 'कामिनी करए सनाने, हेरितहि हृदय हनए पंचवाने' कहकर सद्यःस्नाता कामिनी का उद्दाम चित्रण करते हैं। दाम्पत्य प्रेम का आधार है रति या विलास। रति वर्णन करते समय विद्यापति तनिक भी नहीं सकुचाते। आपने खुलकर स्त्री-पुरूष का मिलन, छेड़छाड़, मान, संभोग, कामकेलि, सौंदर्य लिप्सा आदि सभी का वर्णन रमकर किया। विद्यापति का वियोग वर्णन संयोग की अपेक्षा अधिक दिव्य तथा उच्च कोटि का है। संयोग में जो विलास-वासना है, वह विरहाग्नि में तप गलकर उज्ज्वल भावलोक में जा पहुँची है। वियोग की सभी अवस्थाओं तथा दशाओं का पदावली में चित्रण हुआ है। वियोग वर्णन में प्रकृति का उपयोग उद्दीपन रूप में कर कवि विद्यापति ने पदावली में जागरूकता, सुक्ष्मदर्शिता, मार्मिकता और संवेदनशीलता का भाव उत्पन्न करने में पूर्णतः सफल रहे हैं। विरह वर्णन में कवि विद्यापति ने षटऋतु वर्णन और बारहमासा की पद्धति को भी अपनाया है। उदाहरणस्वरूप-

सखि हे हमर दुखक नहि ओर।
ई भर बादर माह भादर, सून मंदिर मोर।।
झापि घन गरजति संतत, भुवन भरि बरसंतिया।
कंत पाहुन काम दारून, सघन खर सर हंतिसा।।
कुलिस कत सत पात मुदित, मयूर नाचत मातिया।
मत्त दादुर डाक डाहुक, फाटि जाएत छातिया।। (बेनीपुरी 2011:136)

यहाँ कवि ने विरहिणी के हृदय के घनीभूत पीड़ा का वर्णन इस प्रकार किया है कि विरह में प्रकृति की सुखदायी वस्तुएँ भी गहन दुःख प्रदान करनेवाली प्रतीत होती हैं।

3.1.1.3. विविध विषयकः

विद्यापति की पदावली में भक्ति और शृंगार के अतिरिक्त विविध विषय के पदों के अंतर्गत प्रहेलिका, युद्ध, कूट इत्यादि के पद आते हैं। यहाँ एक उदाहरण प्रस्तुत हैः

दूर दुग्गम दमसि भंजओ, गाढ़ गढ़ गूढ़िअ गंजेओ।

पातिसाह समीप सीमा, समर दरसेओ रे।।

दोल तरल निसान सद्यहि, भेरि काहल संख नद्यहि।

तीनि भुवन निकेत केतहि, सान भरिओ रे।।

कीहे नीर पयान चलिओ, वायु मध्ये राअ गरूओ।

तरनि तेअ तुलाधरा, परताप गहिओ रे।। (बेनीपुरी 2011:157)

यहाँ विद्यापति ने अपने आश्रयदाता राजा शिवसिंह के युद्ध का वर्णन ओज के साथ अत्यन्त साकार रूप में किया है।

3.1.2. शिल्प की दृष्टि से 'पदावली' का विवेचनः

काव्य की आत्मा उसका भाव अर्थात् विषय होता है। इसी भाव की अभिव्यक्ति अभिव्यंजना द्वारा होती है। अभिव्यंजना को ही शैली या शिल्प भी कहा जाता है। वास्तव में भाव का होना ही सब कुछ नहीं होता, भाव की सफल अभिव्यंजना का भी महत्त्व होता है। कुशल अभिव्यंजना या शिल्प के कुछ मुख्य तत्व होते हैं। वे इस प्रकार हैं- भाषा, अलंकार योजना, प्रसंगानुकूल छंद योजना, प्रतीक योजना, संगीतात्मकता इत्यादि। मैथिल कोकिल महाकवि विद्यापति केवल भावुक कवि ही नहीं, अपितु कलाशास्त्री और निपुण रीतिशास्त्र के ज्ञाता भी थे। शिल्पगत दृष्टियों से विद्यापति की पदावली में सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं, जिसका अध्ययन विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है।

3.1.2.1. भाषाः

विलक्षण प्रतिभा के धनी विद्यापति का भाषा पर असाधारण अधिकार था। बहुभाषाविद होने के कारण उनका शब्द भण्डार विस्तृत था तथा भावानुकूल भाषा का निर्माण में वे अत्यन्त कुशल थे। ओज,

प्रसाद तथा माधुर्य तीनों गुण पदावली में विद्यमान हैं। लोकभाषा के निकट होने कारण भाषा में सरसता, मधुरता और स्वाभाविकता के गुण भी विद्यमान हैं। पदावली की भाषा को प्राचीन मैथिली माना जाता है। इस संदर्भ में रामवृक्ष बेनीपुरी का कथन है-

पदावली की भाषा आजकल की मैथिली से कुछ भिन्न है। यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति को हुए पाँच सौ वर्ष हुए। इन पाँच सौ वर्षों में भाषा में अवश्य कुछ न कुछ परिवर्तन होना संभव है। (बेनीपुरी 2011:31)

पदावली में प्रसंगानुकूल शब्दों का प्रयोग किया गया है। सार्थक शब्द योजना में विद्यापति पारखी थे। इसके अतिरिक्त पदावली की भाषा में ध्वनि या व्यंग्यार्थ का चित्रण देखते ही बनता हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ है। उदाहरणस्वरूपः

बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया।
नटति कलापति माति श्याम संग, कर करताल प्रबंधक धुनिया।।
डम डम डफ डिमिक डिम मादल, रूनुझुनु मंजिर बेल।
किंकिनि सरनि बलआ कनकनि, निधुबन रास तुमुल उतरोल।।
बीन खाब मुरज स्वरमंडल, सा रि ग म प ध नि सा बहु विधि भाव।
घटिता घटिता धुनि मृदंग गरजनि, चंचल स्वरमंडल करू रावा।। (बेनीपुरी 2011:129)

पदावली में कहावतों और लोकोक्तियों का प्रयोग कर कवि विद्यापति ने भाषा में प्रभावोत्पादकता और प्रेषणीयता उत्पन्न किया है। कहावतों और लोकोक्तियों के प्रयोग में सिद्धहस्त विद्यापति द्वारा प्रयुक्त कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं-

- समय न बूझए अचतुर चोर। (बेनीपुरी 2011:48)
- कउड़ि पठाओलें पाव नहि घोर। घीव उधार माँग मतिभोर।। (बेनीपुरी 2011:89)
- ओछाओन खँड़तरि पलिया चाह। (बेनीपुरी 201189)
- अपनेहि करें हमे मूड़ मुड़ाओल। (बेनीपुरी 2011:137) इत्यादि।

3.1.2.2. अलंकार योजनाः

विद्यापति की पदावली में अलंकारों की छटा सर्वत्र विद्यमान है। कवि विद्यापति ने पदावली में भावोत्कर्ष में सहायक शब्दालंकारों के साथ-साथ अर्थालंकारों का भी निर्वाह किया है। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं, जिनके माध्यम से महाकवि विद्यापति की सकुशल तथा स्वाभाविक अलंकार योजना की कलाकारी को देख सकते हैं-

शब्दालंकारों में अनुप्रास का महत्त्व सर्वोपरि माना जाता है। पदावली का अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे अनुप्रासप्रियता कवि का स्वाभाविक गुण हो। उदाहरणस्वरूपः

रितुपति-राति रसिक रसराज। रसमय रास रभस रस माझँ।।
रसमति रमनि-रतन धनि राहि। रास रसिक सह रस अबगाहि।। (बेनीपुरी 2011:129)

यहाँ 'र' अक्षर के प्रयोग द्वारा वसंत के रासरंग को विचित्र रूप में चित्रित किया गया है। पदावली में अनुप्रास अलंकार का यह उत्कृष्ट उदाहरणों में से एक है। कवि विद्यापति ने अनुप्रास के साथ श्लेष, यमक, पुनरूक्तिप्रकाश शब्दालंकारों का भी प्रयोग किया हैं। यमक अलंकार का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैः

सारँग नयन बयन पुनि सारँग सारँग तसु समधाने।
सारँग उपर उगल दस सारँग, केलि करथि मधु पाने।। (बेनीपुरी 2011:41)

पदावली में अर्थालंकारों की योजना भी अत्यन्त सफल रूप में चित्रित हुई हैं। उपमा, व्यतिरेक, विरोधाभास, अतिशयोक्ति, संदेह, उत्प्रेक्षा, एकावला आदि अर्थालंकारों का प्रयोग पदावली में स्थान-स्थान पर द्रष्टव्य है। निम्नलिखित पद में अर्थालंकारों का चमत्कारपूर्ण प्रयोग देखिए –

कि आरे। नवयौवन अभिरामा।

जत देखल तत कहाए न पारिअ, छओ अनुपम एक ठामा।।

हरिन इंदु अरबिंद करिनि हेम पिक बुझल अनुमानी।

नयन बदन परिमल गति तन रूचि, अओ अति सुललित बानी।। (बेनीपुरी 2011:40)

3.1.2.3. प्रतीक योजनाः

प्रतीक योजना या बिम्ब योजना का भी पदावली में सुंदर निर्वाह हुआ है। प्रतीकात्मकता का अत्यन्त मनोहारी चित्रण विद्यापति ने जगह-जगह किया है। एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

ए सखि पेखलि एक अपरूप। सुनइत मानब सपन-सरूप।।

कमल जुगल पर चाँदक माला। तापर उपजल तरून तमाला।।

तापर बेढ़लि बीजुरि-लता। कालिंदी तट धिरें-धिरें जाता।।

साखा-सिखर सुधाकर पाँति। ताहिं नब पल्लब अरूनिम काँति।।

बिमल बिंबफल जुगल विकास। तापर कीर थीर करू बास।।

तापर चंचल खंजन-मोर। तापर साँपिनि झाँपल मोर।। (बेनीपुरी 2011:54)

3.1.2.4. छंद योजनाः

पदावली में विद्यापति की छंद निपुणता का विस्तृत रूप में परिचय मिलता है। विद्यापति के प्रायः सभी पद मात्रिक सम छंद में रचित है। पदावली में छोटे छंदों के साथ मिश्रित छंदों का भी प्रयोग विद्यापति ने कई स्थलों पर किया है। पद, दोहा, चौपाई, सरसी, सार, त्रिपदी, चर्चरी, झूलना, समानसवैया आदि का प्रयोग करके महाकवि विद्यापति ने अपनी रचनाधर्मिता को खूब निभाया है। समानसवैया छंद का एक उदाहरण यहाँ निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत हैः

नाहि करब बर हर निरमोहिआ।

बित्ता भरि तन बसन् न तन्हिका, बाघ छाल काँख तर रहिआ।। (गोस्वामी 1989:151)

विद्यापति द्वारा भावानुरूप छंद प्रयोग के कारण पदावली के पद सहज ही सभी के अंतर्मन को प्रभावित करते हैं।

3.1.2.5. संगीतात्मकताः

विद्यापति द्वारा रचित पदावली के पद गेय पद हैं। गेयता की दृष्टि से विद्यापति के पद पूर्णतः संगीतात्मक हैं। अपेक्षित ही उनमें लय तथा स्वर-ताल है। गेयता के लिए नाद सौंदर्य का होना पहली महत्त्वपूर्ण बात है। नाद सौंदर्य के लिए विद्यापति ने विविध मार्ग अपनाए। उन्होंने अवधी, ब्रज, मैथिली आदि से कोमलकांत मधुर शबादावली का चयन किया। नाद सौंदर्य के लिए सानुप्रास पदावली, शब्दों की पुनरूक्ति या द्विरूक्ति और गुण या क्रिया से सम्बंधित शब्दों का उपयोग किया। एक पद यहाँ द्रष्टव्य हैः

जय जय भैरवि असुर भयाउनि, पसुपति-भामिनी माया।

सहज सुमति वर दिअ हे गोसाउनि, अनुगति गति तुअ पाया।।

बासर रैनि सवासन् सोभित चरन, चंद्रमणि चूड़ा।

कतएक दैत्य मारि मुँह मेलल, कतेक उगिलि करू कूड़ा।। (बेनीपुरी 2011:36)

उपर्युक्त पद में जैसे एक के बाद एक शब्द ठन-ठनकर गिर रहा है, ऐसा प्रतीत होता है। शब्दों की दुहराहट से संगीतात्मकता दुगुनी हो उठी है, साथ ही लयात्मकता स्वतः आ गई है।

इसी संदर्भ में डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित ने कहा हैं-

विद्यापति का शिल्प मनोवैज्ञानिक आधार पर निखरा है। वे लोक मानस के बड़े पारखी थे, इसलिए उन्होंने अपनी कला को भी लोककला के निकट रखा। उन्होने लोकभाषा अपनाई, उसे लोक हृदय और लोककण्ठ में विराजमान लोकोक्तियों और मुहावरों से सजाया और लोक गीत की तरंगों पर बिठाकर लोगों के इस लोक के आनंद से लेकर लोकोत्तर आनंद तक के लिए मुखरित कर दिया। (दीक्षितः 107)

इस प्रकार अध्ययन विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि- उत्कृष्ट शब्द विन्यास, भाषा, अलंकरण योजना, प्रसंगानुकूल प्रतीक योजना, भावानुकूल छंद योजना तथा संगीतात्मकता के कारण पदावली शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट रचना ठहरती है।

3.2. कथ्य और शिल्प की दृष्टि से 'कीर्तन-घोषा' का विवेचनः

3.2.1. कथ्य की दृष्टि से 'कीर्तन-घोषा' का विवेचनः

बहुमुखी प्रतिभा के धनी शंकरदेव की अक्षय कृति है-'कीर्तन-घोषा'। शंकरदेव द्वारा रचित कीर्तन-घोषा सम्पूर्ण असमीया साहित्य तथा समाज के उच्च आसन् पर अधिष्ठित एक रचना है। एकशरण हरि-नाम धर्म प्रचार हेतु शंकरदेव ने समय-समय पर जिन घोषा गीतों की रचना की थी, उन्हीं का संकलित रूप 'कीर्तन-घोषा' है। ये घोषा गीत असम के आहोम राज्य, हाजो, धुँवाहाटा बेलगुरि, दक्षिण कुल, बरपेटा, बरनगर, पाटबाउसी, कालझार आदि भिन्न स्थानों पर अस्त-व्यस्त रूप में बिखरे हुए थे। शंकरदेव के देहावसान के बाद उनके शिष्य माधवदेव ने अपने भांजे रामचरण ठाकुर द्वारा विभिन्न सत्रों से कीर्तन-घोषा का संकलन सम्पादन कार्य करवाया। भांजे रामचरण ठाकुर के इस कार्य की प्रशंसा में माधवदेव कहते हैं-

मोर गुरुजने गोटाव दिछिल, मई नोवाईलो, गुरुवाक्य परि आछिल सार्थक, भगिन धन, गुरुवाक्य राखिले मोर। (मजुमदार 2014:62)

अर्थात् मेरे गुरु (शंकरदेव) ने मुझे यह काम सौंपा था, पर मैं न कर सका। पर आज भांजे तुमने इस कार्य को पूरा कर मेरे गुरु आज्ञा का मान रख लिया।

माधवदेव के आज्ञानुसार भांजे रामचरण ठाकुर ने जिस रूप में शंकरदेव की कीर्तन-घोषा को संग्रहीत किया, वह उसी क्रम में वर्तमान में भी प्रचलित है। 'घुष' धातु से 'घोषा' शब्द की व्युत्पत्ति हुई है, जिसका अर्थ है 'आवृत्ति' । कीर्तन-घोषा की रचना भी कृष्ण-लीला, हरिभक्ति तथा नाम प्रसंग के लिए की गई थी। आज असम के सत्रों तथा नामघरों में संकीर्तन करने के लिए इन घोषा गीतों का सामूहिक गान किया जाता है। भक्त बड़े ही आदर तथा श्रद्धापूर्वक इन गीतों का संकीर्तन कर आह्लादित हो जाते हैं। असमीया भाषा, साहित्य और भक्ति का त्रिवेणी संगम कीर्तन-घोषा सभी धर्म, जाति तथा समुदाय के लोगों की मानसिक और आध्यात्मिक चेतना को जगाकर मानव जीवन को सफल बनाने का मार्गदर्शक है। शंकरदेव ने सर्वप्रथम बरदोवा निवास काल में कीर्तन-घोषा के सात खण्डों की रचना की। कछारियों के साथ हो रहे लगातार संघर्ष तथा अत्याचार के कारण शंकरदेव अपने साथियों सहित बरदोवा छोड़कर धुँवाहाटा, बेलगुरि में अट्ठारह वर्षो तक निवास करते रहे। यही पर उन्होंने कीर्तन-घोषा के और आठ खण्डों की रचना की। किंतु यहाँ भी अशांतिमय वातावरण के कारण शंकरदेव जीवन के अंतिम समय तक कोच राज्य में निवास करते हैं और वहीं पर कीर्तन-घोषा के अधिकतम चौदह खण्डों की रचना करते हैं। शंकरदेव द्वारा रचित कीर्तन-घोषा की लोकप्रियता को देखकर इसे सत्र तथा नामघर की परिसीमा से निकालकर भक्तसमाज के साथ ही साहित्य प्रेमियों के लिए पहली बार हरिविलास आगरवाला ने सन् 1876 ई. में प्रकाशित किया था। वे असम के 'रूपकोवर' नाम से प्रसिद्ध ज्योतिप्रसाद आगरवाला के दादा थे। हरिविलास आगरवाला के बाद हरिनारायण दत्तबरुवा, महेश्वर नेउँग, यतीन्द्रनाथ गोस्वामी, मेदिनी चौधुरी, दामोदरदेव गोस्वामी, करबी डेका हाजरिका, सूर्य हाजरिका, श्रीमंत शंकरदेव संघ तथा अन्यान्य असम के साहित्यिक संगठनों ने कीर्तन-घोषा का सम्पादन कार्य किया है। कीर्तन-घोषा कथात्मक भक्ति काव्य है,

इसमें कुल 30 खण्ड हैं। अंतिम दो खण्ड घुनुचार कीर्तन और 'रुक्मिणीर प्रेमकलह' को लेकर विवाद हैं। इसलिए इन्हें कीर्तन-घोषा के परिशिष्ट में रखा गया है।

असम के साहित्यरथी नाम से प्रसिद्ध विद्वान लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा लिखते हैं-

हरिबिलास आगरवालाइ छपोवा कीर्तनत श्रीधर कंदलि विरचित घुनुचा कीर्तन बुलि एछोवा इयार पिछत दिया आछे। हाते लिखा अनेक कीर्तन पुथितो कीर्तनर सामरणि घुनुचा यात्रातहे करा हैछे। किंतु कमलाबारी आदि प्रधान प्रधान महापुरुषीया सत्रत नाम-प्रसंगत एइ घुनुचा यात्रा व्यवहार करा नहय। तार कारण बिछारिले देखिबलै पोवा जाय जे सि वास्तविक कीर्तनर भितरत सोमोबर उपयुक्त नहय। (गोस्वामी 1989:21)

अर्थात् हरिबिलास आगरवाला द्वारा छपनेवाली कीर्तन में श्रीधर कंदलि रचित घुनुचा कीर्तन नाम से एक अंश बाद में सन्निहित है। हस्तलिखित अनेक कीर्तन पोथियों की समाप्ति घुनुचा यात्रा से ही हुई है। किंतु कमलाबारी आदि प्रमुख महापुरुषीया सत्रों के नाम-प्रसंग में घुनुचा यात्रा व्यवहृत नहीं होता। उसका कारण खोजने पर देखने को मिलता है कि वह वास्तविक कीर्तन में स्थान पाने योग्य नहीं है।

कीर्तन-घोषा के 30 खण्डों के अंतर्गत 195 कीर्तन हैं। शंकरदेव ने भागवत के द्वादश स्कंध, श्रीमद्भागवत गीता, पद्मपुराण, ब्रह्मपुराण आदि शास्त्र-ग्रंथों के सारतत्व को ग्रहण कर उसी के आधार पर अपनी मौलिक प्रतिभा के बल पर कीर्तन-घोषा की रचना की। शंकरदेव के नववैष्णव धर्म का मूल मंत्र था- 'एक देव एक सेव, एक बिने नाइ केव'। (गोहाँइ 2013: 148) कलिकाल में नामधर्म को ही युगधर्म के रूप में स्वीकार कर शंकरदेव ने असमीया भक्तवत्सल जनता के लिए कीर्तन-घोषा की रचना की। कीर्तन-घोषा वेदांत दर्शन, निष्काम भक्ति, दास्य भावना, सत्संग महिमा, माया से उद्धार हेतु भक्ति की प्रयोजनीयता, भगवान का भक्तवत्सल रूप, शिशु कृष्ण की बाल-लीला आदि गीतों से पुष्ट है।

कथ्य या विषय-वस्तु की दृष्टि से अध्ययन करने पर कीर्तन-घोषा में निहित 30 खण्डों को मूलतः तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैं, जो इस प्रकार है-

3.2.1.1. लीलाप्रधान प्रार्थना विषयक

3.2.1.2. लीलाहीन प्रार्थना विषयक

3.2.1.3. अन्य कथा या तीर्थ विषयक

3.2.1.1. लीलाप्रधान प्रार्थना विषयकः

इसके अंतर्गत 21 खण्ड आते हैं- चतुर्विंशति अवतार वर्णन, प्रह्लाद चरित्र, गजेन्द्रोपाख्यान, हरमोहन, शिशुलीला, कालि दमन, रासक्रीड़ा, कंसबध, गोपी उद्धव संवाद, कुजीर बांछापूरण, जरासंध युद्ध, कालयवन वध, मुचुकंद स्तुति, स्यामंत हरण, नारदर कृष्णदर्शन, विप्र पुत्र आनयन, दामोदर विप्रोपाख्यान, देवकीर पुत्र आनयन, लीलामाला, श्रीकृष्णर वैकुण्ठ प्रयाण।

3.2.1.1.1 चतुर्विंशति अवतार वर्णनः

यह कीर्तन-घोषा का प्रथम खण्ड है। भागवत के प्रथम और द्वितीय स्कंध में वर्णित भगवान विष्णु के 21 अवतारों के साथ शंकरदेव ने और तीन अवतारों (हयग्रीव, गजेन्द्रत्राता और हरि) को संयोग कर चौवीस (24) अवतारों (मत्स्य, कुर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, श्रीराम, हलिराम, बुद्ध, कल्कि, सन्तकुमार, नारद, नरनारायण, कपिल, दत्तात्रेय, यज्ञ, ऋषभ, पृथु, धनंतरी, मोहिनी, व्यास, गजेन्द्र मोक्ष, हयग्रीव, हरि का वर्णन किया है। इसमें 4 कीर्तन और 33 पद पयार छंद में हैं। शंकरदेव ने अपनी मौलिकता का परिचय प्रस्तुत खण्ड के प्रथम पद में ही स्पष्ट कर दिया है, जो इनकी निजी रचनाधर्मिता का साक्षी है-

प्रथमे प्रणामो ब्रह्मरूपी सनातन।

सर्ब अबतारर कारण नारायण।। (गोस्वामी, 1989:01)

अर्थात् यहाँ शंकरदेव ने सर्वप्रथम सनातनरूपी ब्रह्म को प्रणाम कर उनके अवतारवाद, लीलामयी तथा चिरंतन रूप का वर्णन कर मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताया है।

3.2.1.1.2. प्रह्लाद चरित्रः

भागवत पुराण के द्वितीय स्कंध (9वें), तृतीय स्कंध (15 वें 16 वें अध्याय), सप्तम स्कंध (2 से 10 वें अध्याय) का आधार लेकर शंकरदेव ने अपनी मौलिक रचनाधर्मिता से प्रस्तुत खण्ड की रचना की। इस खण्ड में 22 कीर्तन के अंतर्गत 257 पद, झुना छंद में हैं। भगवान विष्णु ने नरसिंह अवतार लेकर हिरण्यकश्यपु को वध कर अपने परम भक्त प्रह्लाद की भक्ति का गौरव बढ़ाया, उसी कथा को यहाँ वर्णित किया गया है। प्रह्लाद चरित्र खण्ड में मूलतः एकशरण हरिभक्ति, भगवान के सर्वविद्यमान रूप, वैष्णव भक्ति और नवधा भक्ति का भी चित्रण हुआ हैं। नवधा भक्ति ही भगवान प्राप्ति का उत्तम मार्ग है, इसका चित्रण प्रस्तुत पद में मिलता है-

श्रवण कीर्तन स्मरण बिष्णुर
अर्चन पद सेवन।
दास्य सखित्व बंदन बिष्णुर
करिब देहा अर्पन।। (बायन 2014:261)

अर्थात् शंकरदेव ने नवधा भक्ति का उल्लेख करते हुए कहा है कि श्री हरि विष्णु का श्रवण, कीर्तन, स्मरण, अर्चन, पादसेवन, दास्य, सखित्व, वंदना और आत्मसमर्पण कर भक्ति करेंगे।

3.2.1.1.3. गजेन्द्रोपाख्यानः

इस खण्ड की रचना भागवत पुराण के अष्टम स्कंध (2, 3 और 4 वें अध्यायों) के आधार पर हुई है। इसमें 3 कीर्तन और 38 पद पयार छंद में हैं। प्रस्तुत खण्ड के कीर्तन में त्रिकुट पर्वत की अनुपम शोभा का

वर्णन, दूसरे कीर्तन में मदमस्त गजेन्द्र (इंद्र का हाथी) का केलि और तीसरे कीर्तन में ग्राह (मगरमछ) और गजेन्द्र के बीच युद्ध तथा भगवान द्वारा गजेन्द्र का उद्धार का वर्णन हैं। उदाहरणस्वरूपः

परम आनंदे माधवत दिया चित्त।

गजेन्द्रे करिल तुति अति बिपरीत।। (गोस्वामी 1989:120)

अर्थात् संकट में अन्य उपाय न देख गजेन्द्र परम निष्ठा से एकाग्रचित्त होकर माधव (कृष्ण) की स्तुति करने लगा।

3.2.1.1.4. हरमोहनः

कीर्तन-घोषा के आख्यानमूलक खण्डों में हरमोहन अन्यतम है। भागवत पुराण के अष्टम खण्ड के द्वादश (12वें) अध्याय के आधार पर इस खण्ड की रचना शंकरदेव ने की। इसमें 10 कीर्तन के अंतर्गत 98 पद पयार, दुलड़ी, छवि छंदों में रचित हैं। प्रस्तुत खण्ड में भोलेनाथ शंकर किस प्रकार विष्णु के मोहिनी रूप की माया में वशीभूत होकर अपना ज्ञान विवेक सब खोया और क्या-क्या दुर्दशा हुई उसका वर्णन है। साथ ही हरि और हर की अभेदता को भी इस खण्ड में दिखाया है। प्रस्तुत खण्ड में शृंगार का भव्य चित्रण हुआ है। एक पद यहाँ देखिएः

शुना शुना ज्ञानशाली तोमारेसे बाक्य

देखाइलो दुष्टर स्त्री–माया।

आत नकरिबा खेद किंचितो नाहिके भेद

तोमारे आमारे एके काया।। (गोस्वामी 1989142)

अर्थात् विष्णु भगवान महादेव को कहते हैं कि सुनो महाज्ञानी, तुम्हारे अनुग्रह को रखते हुए ही मैंने स्त्री रूपी माया को दिखाया। अब इस बात के लिए पछतावा न करो, क्योंकि तुममें और मुझमें भेद नहीं है। वास्तव में हमारी तुम्हारी अर्थात् हरि और हर की काया एक ही है।

3.2.1.1.5. शिशु-लीलाः

प्रस्तुत खण्ड का मूल आधार भागवत के दशम स्कंध के तृतीय से पंचम अध्याय तक है। प्रस्तुत खण्ड में भगवान श्रीकृष्ण देवकी के यहाँ जन्म से लेकर बड़े होने तक की भिन्न लीलाओं तथा अत्याचारियों को नाश करने का वर्णन 8 कीर्तन और 120 पयार, झुना आदि छंदों में रचित हैं। कृष्ण भगवान विष्णु के पुर्णावतार हैं। इस खण्ड में कृष्ण की विभिन्न लीलाओं के माध्यम से ज्ञानमार्ग से भक्तिमार्ग को श्रेष्ठ बताया है। एक पद यहाँ देखिएः

शिशुभावे गोकुलत क्रीड़िला अपार।
साधिला अनेक प्रीति नंद यशोदार।। (गोस्वामी 1989:163)

अर्थात् मानव शिशु के रूप में अवतार लेकर कृष्ण ने गोकुल में अनेक लीलाएँ की और साथ ही नंद-यशोदा से अगाध प्रेम को भी पा लिया।

3.2.1.1.6. कालि दमनः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 16 वें और 17 वें अध्यायों के आधार पर शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा, में कालि दमन खण्ड की रचना की। इस खण्ड में 3 कीर्तन और 165 पद झुना छंद में रचित हैं। बालक कृष्ण ने किस प्रकार कालि नाग (सर्प) का दर्प नाश कर शांति की प्रतिष्ठा की है, उसी का अनुपम चित्रण किया गया है। उदाहरणस्वरूपः

कालिक दमिबे करि जतन।
कटित बांधिला पीत बसन्।। (गोस्वामी 1989:189)

अर्थात् कृष्ण ने कालि-नाग का दमन करने के उद्देश्य से पीत वस्त्र धारण कर लिया।

3.2.1.1.7. रासक्रीड़ाः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के (29 वें से 33 वें अध्याय) आधार पर शंकरदेव ने इस खण्ड की रचना की। इसमें कृष्णभक्त गोपियों संग श्रीकृष्ण का शरदकालीन पूर्णिमा रात्रि कामकेलि का वर्णन, एकनिष्ठ भक्तिभाव और आत्मा-परामात्मा का मिलन का चित्रण 18 कीर्तन के अंतर्गत 218 पदों में किया है, जो झुना छंदों में रचित है। उदाहरणस्वरूपः

कृष्ण सम रंगे आति नाचे गोपीजाक।
नान भंगि चरण चलाया फुरे पाक।। (गोस्वामी 1989:229)

अर्थात् कृष्ण के समान अति रंग मन से गोपियाँ नाचने लगी तथा विभिन्न भंगिमाओं से पैरों को चलाकर घूमने लगीं।

3.2.1.1.8. कंसबधः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 37 वें से 45 वें तक के अध्याय में वर्णित कथा के आधार पर शंकरदेव ने संक्षिप्त रूप में कंसबध खण्ड की रचना की। इसमें भगवानद्रोही, दुराचारी कंस का मानवतार श्रीकृष्ण द्वारा निधन की कथा को 15 कीर्तन के अंतर्गत 214 झुना-दुलड़ी आदि छंदों में चित्रित किया गया है। उदाहरणस्वरूपः

अचिंत्य महिमा हरि लीलायें हासिया।
आलगते कंसक धरिला चाम्प दिया।।
गुचिल प्रभाव तार हत भैल दर्प।
गरुड़र हाते जेन बंदी भैल सर्प।। (गोस्वामी 1989:291)

अर्थात् चिंता से परे महिमामय भगवान हरि कृष्ण लीला करते हुए हँसने लगे, साथ ही दुष्ट कंस को पकड़कर दबोच लिया। जिससे कंस के अंहकार का पतन और वह कृष्ण के हाथों में इस प्रकार बंदी हो गया जिस प्रकार गरुड़ के हाथों में कोई सर्प होता है।

3.2.1.1.9. गोपी उद्धव संवादः

प्रस्तुत खण्ड की रचना भागवत के दशम स्कंध के 46 वें अध्याय के सार के आधार पर शंकरदेव ने संक्षेप में की। इसमें 1 कीर्तन के अंतर्गत 24 पद हैं, जिसमें विरहिणी ब्रज गोपियों की मार्मिक तथा एकनिष्ठ कृष्णप्रेम का चित्रण गोपी उद्धव के बीच हुए कथोपकथन के माध्यम से दिखाया गया है। उदाहरणस्वरूपः

उद्धबे गोपीर देखिया भाव।
बिस्मय हुया शिहराइला गाव।। (गोस्वामी 1989:296)

अर्थात् कृष्ण के सखा उद्धव ने जब गोपियों का कृष्ण प्रेम देखा, तो उसके शरीर में आश्चर्य से रोंगटे खड़े हो गए।

3.2.1.1.10. कुँजीर बांछापुरणः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 47 वें अध्याय के आधार पर रचित इस खण्ड में 1 कीर्तन और 11 पद दुलड़ी छंद में हैं। भक्ति तत्व को श्रेष्ठ प्रतिपादित करना ही इस खण्ड का मुख्य उद्देश्य है। इसमें कुँजी (सौरंध्री) के सेवा भाव से प्रसन्न कृपालु श्रीकृष्ण किस तरह उसका मनोरथ पूर्ण करते हैं, उसी का चित्रण है। उदाहरणस्वरूपः

चंदन अर्पन बिने कुबुजार।
आन किछु पुण्य नाइ।
एतेकते हेन देखियो परम
प्रसाद पाइलेक ताइ।। (गोस्वामी 1989:302)

अर्थात् चंदन अर्पण के अतिरिक्त कुब्जा ने कोई पुण्य नहीं किया। इसी पुण्य को कमाकर उसने कृष्ण का परम अनुग्रह प्राप्त किया।

3.2.1.1.11. अक्रुरर बांछापुरणः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 48 वें अध्याय के आधार पर शंकरदेव ने संक्षेप में इस खण्ड की रचना की। इसमें भगवान श्रीकृष्ण भक्त अक्रुर की भक्ति से प्रसन्न होकर उसके गृह पधार कर भक्त की मनोवांछा पूर्ण करने की कथा 1 कीर्तन और 12 पदों में चित्रित है। उदाहरणस्वरूपः

परम सादरे कृष्णर चरण

कोलात लेया झांतिल।

प्रणति पुर्बके तुति करिबाक

अक्रुरे पाछे लागिल।। (गोस्वामी 1989:304)

अर्थात् बड़े आदर से कृष्ण के पैरों को अपने गोद में लेकर अक्रुर ने साफ किया, फिर प्रणयपूर्वक उनकी स्तुति प्रार्थना करने लगा।

3.2.1.1.12. जरासंध युद्धः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 50 वें अध्याय की कथा पर आधारित इस खण्ड में 3 कीर्तन के अंतर्गत 47 पद झुना-झुमुरी छंद हैं। मगध राजा जरासंध के साथ कृष्ण का युद्ध वर्णन तथा जरासंध वध की कथा यहाँ वर्णित है। एक पद यहाँ देखिएः

कृष्णर किंकरे गीत भणिला शंकरे।

नाहि आन धर्म आर कीर्तनत परे।। (गोस्वामी 1989:313)

अर्थात् कृष्ण के दास शंकरदेव ने कृष्ण लीला के गीत रचकर यही कहा है कि कृष्ण कीर्तन के अलावा अन्य धर्म नहीं है।

3.2.1.1.13. कालयवन बधः

प्रस्तुत खण्ड की रचना भागवत पुराण के दशम स्कंध के 51 वें अध्याय के आधार पर की गई है। इसमें 2 कीर्तन और 21 पद हैं। यवनराज कालयवन का मथुरा आक्रमण , द्वारका नगरी का निर्माण और कृष्ण लीला द्वारा मुचुकंद की क्रोधदृष्टि, कालयवन का बध आदि कथ्य का अत्यंत सरस रूप में चित्रण किया है। एक पद यहाँ देखिएः

दुर्लभ मनुष्य जन्म नकरियो बृथा।
करा हरि कीर्तन एड़िया गाम्य कथा।। (गोस्वामी 1989:320)

अर्थात् कवि शंकरदेव कहते हैं कि मनुष्य जनम दुर्लभ है, इसलिए इसे व्यर्थ मत गंवाओं। हरि कीर्तन करो और सांसारिक बातों का त्याग करो।

3.2.1.1.14. मुचुकंद स्तुतिः

यह खण्ड भागवत पुराण के दशम स्कंध के 51 वें अध्याय के आधार पर रचित है। इसमें 4 कीर्तन और 51 पद हैं। मानवता के पुत्र मुचुकंद द्वारा असुरों से स्वर्ग की रक्षा, देवताओं द्वारा वर प्रदान, पर्वत की गुफा में निद्रा का वरदान, क्रोधाग्नि से कालयवन को भस्मीभूत करना और कृष्ण की स्तुति आदि का वर्णन है। उदाहरणस्वरूपः

माधवे बोलंत शुना मुचुकंद राय।
तोमार निर्मल मति भैल समुदाय।। (गोस्वामी 1989:334)

अर्थात् माधव कहने लगे, सुनो राजा मुचुकंद! तुम्हारे निष्कपट भक्ति भाव से मैं प्रसन्न हुआ।

3.2.1.1.15. स्यामंत हरणः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 57 वें अध्याय के आधार पर शंकरदेव ने 9 कीर्तन और 71 पदों में इस खण्ड की रचना की है। स्यामंत मणि को लेकर कृष्ण और जाम्बवंत के बीच हुए घमासान युद्ध का वर्णन और अंत में कृष्ण के वास्तव सत्ता को पहचान कर अपनी पुत्री का विवाह कृष्ण के साथ कराकर स्यामंत मणि भेंट देने की कथा यहाँ वर्णित है। यह खण्ड अत्यंत लोकप्रिय है। एक पद यहाँ देखिएः

देखंत सबे आइल यदुराय।
मरि उपजिला येन दुनाइ।।
लगते कन्याक आसिला लइ।
समस्त सुहृदे बेढ़िला गइ।। (गोस्वामी 1989:352)

अर्थात् द्वारकावासी सभी ने जब यदुमणि कृष्ण को आते देखा तो, जैसे उनके प्राणों में जान लौट आई और जब कृष्ण के साथ कन्या (जाम्बबंती) को देखा तो सभी सहृदयों ने उन्हें घेर लिया।

3.2.1.1.16. नारदर कृष्णदर्शनः

भागवत के दशम स्कंध के 69 वें अध्याय के आधार पर रचित इस खण्ड में शंकरदेव ने श्रीकृष्ण के सोलह हजार आठ भार्याओं के साथ गृहस्थ जीवन लीला को देख नारद का आश्चर्यचकित होने की कथा को 5 कीर्तन और 51 पदों में चित्रित किया है। उदाहरणस्वरूपः

कृष्णर मनुष्य लीला चरित्र।
जगतके इटो करे पवित्र।। (गोस्वामी 1989:367)

अर्थात् मानव अवतार लेकर कृष्ण रूपी भगवान ने लीला कर संसार को पवित्र कर दिया।

3.2.1.1.17. विप्र पुत्र आनयनः

इस खण्ड में 4 कीर्तन के अंतर्गत 52 पद हैं, जो पयार तथा झुना-झुमुरी छंद में हैं। भागवत पुराण के दशम स्कंध के 89 वें अध्याय के आधार पर इस खण्ड की रचना शंकरदेव ने की है। अर्जुन द्वारा विप्र पुत्रों का उद्धार का वर्णन इस खण्ड में वर्णित है। उदाहरणस्वरूपः

बिष्णुर तेज देखि धनंजय।
भैलंत मनत आति बिस्मय।।
पौरुष पुरुषर किछु नुइ।
कृष्णर प्रसादे समस्ते हुइ।। (गोस्वामी 1989:379)

अर्थात् विष्णु अर्थात् कृष्ण के तेज को देख अर्जुन का मन अत्यंत आश्तर्यचकित हो गया। पुरुषों का पुरुषत्व होने पर भी कुछ नहीं होता, जो कृष्ण के आशीर्वाद से प्राप्त होता है।

3.2.1.1.18. दामोदर विप्रोपाख्यानः

भागवत पुराण के दशम स्कंध के 80 से 81 वें अध्याय की कथावस्तु के आधार पर शंकरदेव ने प्रस्तुत खण्ड की रचना 4 कीर्तन और 35 पदों में की है। इसमें विप्र दामोदर के निष्काम भक्ति से प्रसन्न श्रीकृष्ण द्वारा दामोदर को परम सम्पद का लाभ कराने की कथा वर्णित है। उदाहरणस्वरूपः

सखिक आलिंगि आति प्रीति पाइला।
आनंदे लोतक झरे।।
सोणार खाटत बसुवाइला निया
धरिया आति सादरे।। (गोस्वामी 1989:384)

अर्थात् कृष्ण अपने सखा सुदामा से गले मिलकर प्रेम से गदगद हो उठे और इसी आनंद के कारण उनके नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी। फिर सुदामा को कृष्ण ने बड़े ही आदर सत्कार के साथ सोने की पलंग पर बिठाया।

3.2.1.1.19. देवकीर पुत्र आनयनः

भागवत के दशम स्कंध के 85 वें अध्याय के आधार पर 3 कीर्तन के अंतर्गत 35 पदों में शंकरदेव ने प्रस्तुत खण्ड की रचना की। कंस द्वारा बध किए गए मृत पुत्रों को कृष्ण बलराम द्वारा उद्धार कर माता देवकी को लौटाने और कृष्ण के माहात्म्य का वर्णन प्रस्तुत खण्ड में किया हैं। उदाहरणस्वरूपः

देखिया दैबकी भैल बिस्मय।
आसिल मोर मरा पुत्रचय।। (गोस्वामी 1989:405)

अर्थात् भ्राता कंस द्वारा जन्म होते ही मारे गए अपने छह पुत्रों को देवकी देख आश्चर्यचकित हुई, क्योंकि कृष्ण ने उसके मृत पुत्रों को उसे लाकर दिया है, जो कृष्ण की लीला मात्र है।

3.2.1.1.20. लीला-मालाः

भागवत के दशम स्कंध के सार तत्व को ही आधार मानकर शंकरदेव ने इस खण्ड की रचना की। इसमें श्रीकृष्ण के भिन्न तथा रहस्यमय लीलाओं का वर्णन ही 7 कीर्तन और 109 पदों में किया गया है। उदाहरणस्वरूपः

श्रबण कीर्तने आर बैकुण्ठक याय।
धर्म अर्थ काम मोक्ष आत सबे पाय।।
ब्रह्माये प्रार्थिला देखि पृथिबीर त्रास।
लैला दैबकीर उदरत हरि बास।। (गोस्वामी 1989:415)

अर्थात् शंकरदेव के अनुसार केवल हरि नाम श्रवण-कीर्तन करके ही स्वर्ग प्राप्ति हो सकती है तथा धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ये सब केवल हरि कीर्तन से ही सबको मिल सकता है। दुष्टों के अत्याचार से संसार का विनाश देख जब ब्रह्मा ने परामात्मा की प्रार्थना की तो भगवान विष्णु ने स्वयं देवकी के गर्भ में मनुष्य लीला करने हेतु पैदा हुए।

3.2.1.1.21. श्रीकृष्णर वैकुण्ठ प्रयाणः

भागवत पुराण के एकादश और तृतीय स्कंध के आधार पर रचित इस खण्ड में 19 कीर्तन और 235 पद हैं। इस खण्ड में श्रीकृष्ण के वैकुण्ठ प्रयाण की कथा के साथ अर्जुन युधिष्ठिर संवाद तथा उद्धव विलाप कथा का भी संयोजन किया गया है। प्रस्तुत खण्ड में भक्तितत्व की अनेक मूल कथाएँ चित्रित हैं। उदाहरणस्वरूप एक पद देखिएः

बिष्णुमय देखे जिटो समस्त जगत।
जीवंते मुकुत होवे अचिर कालत।। (गोस्वामी 1989:450)

अर्थात् जिस व्यक्ति को समस्त संसार में भगवान विष्णु के ही दर्शन होते हैं अर्थात् सभी में विष्णु ही नजर आएँ तो वह व्यक्ति जीवित अवस्था में ही मोक्ष प्राप्त करने में सक्षम होता है।

3.2.1.2. लीलाहीन प्रार्थना विषयकः

इसके अंतर्गत 7 खण्ड आते हैं- नामापराध, पाषण्ड मर्दन, ध्यान वर्णन, अजामिलोपाख्यान, बलिछलन, वेदस्तुति, सहस्रनाम वृत्तांत और भागवत तात्पर्य वर्णन।

3.2.1.2.1. नामापराधः

पद्मपुराण के स्वर्गखण्ड के 48 वें अध्याय के साथ 32 वें अध्यायों को जोड़ कर उसी के आधार पर शंकरदेव ने नामापराध खण्ड की रचना की थी। इसमें 2 कीर्तन के अंतर्गत 38 झुना छंद हैं। प्रस्तुत खण्ड में

नाम-धर्म के महत्त्व को प्रतिपादित करने के साथ ही विष्णु और शिव की अभेदता को भी चित्रित किया है। नामधर्म के महत्त्व का चित्रण करते हुए शंकरदेव कहते हैं-

यिटो मंदमति अधम नरे।
हरिरो महा अपराध करे।।
नामत शरण लवै बारेक।
नामे हरे तार सब पातेक।। (गोस्वामी 1989:11)

अर्थात् जो मूर्ख तथा अधम मनुष्य अपने कुकर्मों से हरि अर्थात् भगवान की दृष्टि में भी महा अपराध करता है। शंकरदेव के अनुसार यदि वह मनुष्य भी नाम धर्म में लेकर बारम्बार हरि नाम ले तो उसके सभी पाप धूल जाते हैं।

3.2.1.2.2. पाषण्ड मर्दनः

श्रीमद्भागवतपुराण, पद्मपुराण के उत्तराखण्ड, वृहतसहस्रनाम, विष्णु धर्मोत्तर, वृहन्नारदीय पुराण, सूरसंहिता आदि के आधार ग्रहण कर शंकरदेव ने इस खण्ड की रचना की है। इस खण्ड में 4 कीर्तन और 74 पद झुना छंद में हैं। शंकरदेव ने हरिभक्त निंदक और भक्तिधर्म के विरोधियों के मुँह बंद करने के लिए पाषण्ड मर्दन की रचना की। एक पद देखिए-

चाण्डाले करिछे हरि-कीर्तन।
बुलिया ताक निंदे अज्ञ जन।।
ताक संभाषण यिजने करे।
आजन्मर पुण्य केखने हरे।। (गोस्वामी 1989:20)

अर्थात् चण्डाल के हरि-कीर्तन करने पर जो व्यक्ति उसकी निंदा करता है, वह अज्ञानी ही होता है और इस कार्य का जो व्यक्ति स्वागत करता है वही जन्मों-जन्मों तक पुण्य लाभ करता है।

3.2.1.2.3. ध्यान वर्णनः

भागवत पुराण के तृतीय स्कंध के आधार पर शंकरदेव ने वैकुण्ठ और वैकुण्ठपति के ऐश्वर्य एवं रूप का वर्णन 2 कीर्तन और 28 झुना छंदों में किया है। उदाहरणस्वरूपः

दृढ़ करि धरा हरिर पाव।
पाप सागरत एहिसे नाव।। (गोस्वामी 1989:37)

अर्थात् शंकरदेव कहते हैं कि हमें अपनी मन को दृढ़तापूर्वक हरि के चरणों में लगा लेना चाहिए, क्योंकि पापमय संसार समुद्र को पार करानेवाली यही एक नाव अर्थात् मार्ग है।

3.2.1.2.4. अजामिलोपाख्यानः

भागवत पुराण के छठा स्कंध के पहले तीन अध्यायों के विषय-वस्तु के आधार पर रचित इस स्कंध की रचना शंकरदेव ने 4 कीर्तन और 42 त्रिपदी दुलड़ी छंद में की है। इस खण्ड का मूल उद्देश्य है- चित्त या आत्मशुद्धि की व्यवस्था, जिसे अजामिल नामक ब्राह्मण जो पापी तथा दुराचारी होता है, पर अंत समय में यमदूतों को देख भय से अपने पुत्र नारायण का नाम उच्चारण करने लगता है। नारायण नाम उच्चारण करने मात्र से ही उसके सभी पापों का नाश हो जाता है, कयोंकि नारायण भगवान का ही एक नाम है-

मरिबार बेला इटो अजामिले
नारायण नाम लेल।
कोटि जनमरो यत महापाप
तारो प्रायश्चित्य भैल।। (बायन 2014:251)

अर्थात् अपने मृत्यु के समय जब अजामिल ने नारायण नाम लिया तो उसके कोटि जन्मों के महापापों का खण्डण उसी समय हो गया।

3.2.1.2.5. बलिछलनः

भागवत पुराण के आठवें अध्याय (15 से 23 तक), वामण पुराण (27 से 31 तक और 89 से 92 तक), हरिवंश पुराण के तृतीय अध्याय (70 से 72 तक) में वर्णित कथाओं में यह आख्यान मिलता है। उसी के साथ संगति रखते हुए शंकरदेव ने 5 कीर्तन के अंतर्गत 33 पयार और दुलड़ी छंदों में इस खण्ड की रचना की है। प्रस्तुत खण्ड में वामनरूपी भगवान ने देवताओं के हितार्थ राजा बलि को छल कर पाताल भेजने और पाताल के सुतलपुरी में बलि का हरिभक्ति में लीन होने की कथा वर्णित है। उदाहरणस्वरूपः

बलिर सदृश   नाहि सुपुरुष
बैष्णवत सारोत्तर।
यार यश राशि   थाकिल प्रकाशि
यावे चंद्र दिबाकर।।   (गोस्वामी 1989:160)

अर्थात् दैत्यकुल में जन्मे राजा बलि के समान अन्य कोई सुपुरुष नहीं है जो वैष्णव धर्म के सारमर्म को जानता है। उनकी ख्याति तब तक प्रज्ज्वलित रहेगी, जब तक चांद और सूर्य रहेंगे।

3.2.1.2.6. वेदस्तुतिः

कीर्तन और 26 पदों में रचित इस खण्ड का आधार भी भागवत के दशम स्कंध का 87 वां अध्याय है। किंतु यह खण्ड मूलतः तत्वज्ञान और प्रार्थना प्रधान है। अद्वैतवादी तत्व का चित्रण भी इसमें मिलता है। उदाहरणस्वरूपः

जीब अंशे तुमि प्रबेशिला गावे-गावे।

आवे आमि तोमाक भजोहो सर्बभावे।। (गोस्वामी 1989:407)

अर्थात् परामात्मा के अंश रूप में तुम प्रत्येक जीवमात्र के शरीर में विद्यमान हो। तुम्हें मैं (शंकरदेव) सर्बभाव से स्तुति करता हूँ।

3.2.1.2.7. सहस्र नाम वृत्तांतः

इस खण्ड की रचना रत्नाकर कंदलि ने की है। शंकरदेव के प्रिय होने के कारण उन्होंने इस खण्ड को अपने कीर्तन में स्थान दिया था। इसी बात की पुष्टि असमीया विद्वान डॉ. महेश्वर नेओग ने की है (गोस्वामी 1989:20)। इस खण्ड में 6 कीर्तन और 77 पद हैं। एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

किनो हरि नामर महिमा।
कोने कहि पाइबे तार सीमा।।
आतपरे धर्म नाहि आन।
राम-नाम सदा करा पान।। (गोस्वामी 1989:502)

अर्थात् हरि नाम की महिमा क्या है तथा उसकी सीमा बताने में कोई भी सक्षम नहीं है। इसीलिए हरि या राम नाम सदा जपना ही परम धर्म है।

3.2.1.2.8. भागवतर तात्पर्य वर्णनः

कलियुग में हरिभक्ति ही सर्वोत्कृष्ट मुक्ति का मार्ग बताकर शंकरदेव ने 2 कीर्तन और 21 पदों में इस खण्ड की रचना की है। भागवत के द्वादश स्कंध के आधार पर यह रचित है। हरिभक्ति, एकशरण भक्ति और भागवत का महत्त्व इसमें वर्णित है। एक पद देखिए-

कलित लोकर मलिन मति।

नुपजय आन पुण्य सम्पृति।।

नामेसे परम धर्म कलित।

नामेसे मरण-समल-बित।।

हेन जानि तेजा विषय धांदा।

हरिर नामक गलत बांधा।। (गोस्वामी 1989:567)

अर्थात् कवि शंकरदेव कहते हैं कलियुग में लोगों का मन पाप से अपवित्र होगा। दूसरों के पुण्य तथा अच्छा असहनीय होगा। केवल नाम धर्म ही कलियुग में परम धर्म होगा तथा मोक्ष प्राप्ति का उपाय होगा। इसलिए इस बात को जाननेवाले सभी विषय सुख को त्यागकर एकमात्र हरि नाम को अपने गले में धारण करो अर्थात् हरि नाम का कीर्तन करो।

3.2.1.3. अन्य कथा तथा तीर्थ विषयकः

इसमें 1 खण्ड आता है। वह है- 'उरेषा वर्णन'।

3.2.1.3.1. उरेषा वर्णनः

ब्रह्मपुराण के कुछ अध्यायों के आधार पर रचित यह खण्ड 21 कीर्तन के अंतर्गत 225 पद पयार, झुना, दुलड़ी, छवि आदि छंदों में रचित है। प्रस्तुत खण्ड में जगन्नाथ की महिमा, महाप्रसाद के महत्त्व के साथ ही पंचतीर्थ, शिवमंत्र, शिवलिंग महिमा, कात्यायनी स्तुति, सूर्यवंदना आदि कथा वर्णित है। यहाँ एकशरण हरि नाम भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। उदापरणस्वरूपः

जगन्नाथ नाम इटो परम रहस्य।

आक सदा लबे जिटो करि मन बश्य।।

सिटोजने अप्रयासे झिंदे कर्म-बंध।

हातते मुकुति तार नालागे प्रबंध।। (गोस्वामी 1989:559)

अर्थात् जगन्नाथ नाम में परम रहस्य छिपा है। इसलिए सदा इसका एकनिष्ठ भाव से नाम स्मरण करना चाहिए, जिससे वह मनुष्य बिना प्रयास करके ही सांसारिक कर्म बंधन से दूर हो सकता है तथा उसे मुक्ति पाने के लिए और कोई अन्य उपाय करना नहीं पड़ता।

3.2.2. शिल्प की दृष्टि से 'कीर्तन-घोषा' का विवेचनः

नववैष्णव भक्ति का प्रचार ही शंकरदेव का मुख्य उद्देश्य था, किंतु साथ ही उनकी असाधारण रचनाधर्मिता की प्रतिभा के कारण वे एक सफल साहित्यिक के रूप में भी अमर हो गए। शंकरदेव की सर्वाधिक लोकप्रिय कृति कीर्तन-घोषा साहित्यिकता का अनुपम निदर्शन है। यहाँ शिल्पगत सभी दृष्टियों से कीर्तन-घोषा का अध्ययन कर उसका विवेचन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया हैः-

3.2.2.1. भाषाः

संस्कृत के निष्णात पण्डित शंकरदेव ने संस्कृत में ग्रंथों का संकलन रचना तो की ही, साथ ही उन्होंने ब्रजबुलि और असमीया भाषा में भी साहित्य रचना की। संस्कृत साहित्य के भण्डार से भक्तिरस को साधारण लोक तक बोधगम्य कराने हेतु उन्होंने लोकभाषा असमीया में कीर्तन-घोषा की रचना की। वैसे तो कीर्तन-घोषा की भाषा प्राचीन असमीया है। तत्सम, तद्भव, अर्धतत्सम और आर्यभिन्न शब्दों के प्रयोग, लोक प्रचलित तथा तत्सम शब्दों का व्यंजनामय मिश्रण करते हुए जनजीवन में प्रचलित उपमानों के माध्यम से विषय-वस्तु को सजीव रूप में चित्रित कर जनसाधारण के मानस-पटल को जीतकर कीर्तन-घोषा की रचना की, यह महापुरुष शंकरदेव की असाधारण कवित्व प्रतिभा का साक्षी होने के साथ वैष्णव साहित्य का कीर्ति-स्तम्भ भी है। ध्वनिगत और रूपगत दृष्टियों से कीर्तन-घोषा में अनेक विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं। उदाहरणस्वरूप-

3.2.2.1.1. ध्वनिगत विशेषताः

कीर्तन-घोषा में संस्कृत वर्णमाला के प्रायः स्वर और व्यंजन वर्णों का प्रयोग हुआ है। ध्वनिगत दृष्टि से प्रायः वर्ण के अंत में 'अ' संयोग कर उच्चारण करने से अंत्यवर्ण का मेल स्पष्ट दिखाई देता है।

- 'अ' ध्वनि का 'आ' में परिवर्तन होना-

  तथापिटो आखि फुटिल तार

  हरि-कीर्तनक करे धिक्कार।। पाषण्ड मर्दन, पद संख्या 32 (गोस्वामी, 1989:23)

  अर्थात् जो नर हरि कीर्तन की निंदा करता है उसकी आँखें फुट जाती है।

  यहाँ 'अक्षि' का 'आखि' होना।

- म के अतिरिक्त स्पर्श वर्ण के पूर्ववर्ती श, स, ष का लोप। उदाहरणस्वरूप-

  कतो गोपिकारो करे परशंत तन। (गोस्वामी 1989:232)

  अर्थात् कितनी ही गोपियों के स्तनों को कृष्ण ने स्पर्श किया।

  यहाँ 'स्तन' शब्द का 'तन' में परिवर्तन हुआ है, अर्थात् पूर्ववर्ती 'स' का लोप हुआ है।

3.2.2.1.2. रूपगत विशेषताः

शब्द भण्डार-

तत्सम- कर्म, कमल, ईश्वर, जन्म, नेत्र, जल, कृष्ण आदि।

अर्धतत्सम- भक्ति>भकति, यत्न>यतन आदि।

तद्भव- काम, सात, हात, माज आदि।

धन्यात्मक- कुहुकुहु, झकमक, हुकहुक आदि।

कीर्तन-घोषा में द्राविड़, अरबी, पार्ची शब्द का भी प्रयोग देखने को मिलता है। जैसेः

- भकतिर पातिला देवान- यहाँ 'देवान' अरबी शब्द है। (बलिछलन) (गोस्वामी 1989:158)

अर्थात् भक्ति सभा का आयोजन किया।

- नजानि लोके आन देव पूजै- यहाँ 'पूजा' द्राविड़ शब्द है। (कंसवध) (गोस्वामी 1989:261)

अर्थात् न जानकर लोग अन्य देव को पूजते हैं।

कीर्तन-घोषा में शब्द प्रयोग के संदर्भ में भारत के साथ असम की एकसूत्रता को मानकर असमीया विद्वान आनंद चंद बरुवा का कहना है-

कीर्तनत प्रचुर परिमाणे मैथिली ब्रजबुलि आदि शब्दर व्यवहार करा हैछे। वैष्णव धर्मर लीलाभूमि हिन्दुस्तानर साधनार लगत असमर संयोग एक करिबर बाबे शंकरदेवे तेने करिछिल बुलि कब पारि। (भकत 2007:41)

अर्थात् कीर्तन में अधिकांश मात्रा में मैथिली ब्रजावली आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। वैष्णव धर्म की लीलाभूमि हिन्दुस्तान की साधना के साथ असम को एकसूत्र करने के लिए शंकरदेव ने वैसा किया, ऐसा कहा जा सकता है।

कीर्तन-घोषा में स्पष्ट, सुंदर तथा कुशलतापूर्वक शंकरदेव ने लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार है-

- कषटिक जेन सोणर रेखा (ध्यानवर्णन) (गोस्वामी 1989:35)
- चुम्बकर काछे लोहा भ्रमै जेन ठाने (प्रह्लाद चरित्र) (गोस्वामी 1989:80)
- अगनिर आगे जेन क्षुद्र फिरिंगति (शिशुलीला) (गोस्वामी 1989:184)

3.2.2.2. अलंकार योजनाः

काव्य को अधिक प्रभावशाली, रमणीय रूप देने में कवि तथा साहित्यकार अलंकार योजना का सुनिर्वाह् करता है। भागवत के सार सदृश एवं अमृत स्वरूप कीर्तन-घोषा रस, अलंकार से सुसमृद्ध एक अनुपम ग्रंथ है। कीर्तन-घोषा को उच्चकोटि का स्थान प्राप्त है, जिसका प्रमुख कारण है-इसकी अलंकार योजना। शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों के ही प्राचुर्य की छटा कीर्तन-घोषा में सर्वत्र विद्यमान है।

3.2.2.2.1. शब्दालंकारः

शब्दालंकारों में अनुप्रास के सभी रूपों के साथ साथ यमक, श्लेष, वक्रोक्ति अलंकारों का सुंदर योजना की गई है। अनुप्रास अलंकार का एक उदाहरण 'हरमोहन' खण्ड से देखिए-

शेवालि नेवालि पलाश पाशलि
पारिजात युति जाइ।
बकुल बुन्दुली आछे फुलि फुलि
तारे सीमा संख्या नाइ।। (गोस्वामी 1989:127)

अर्थात् शेवालि, नेवालि, पलाश, पाशलि, पारिजात, जुति, जाई, बकुल, बुंदुली आदि कितने फूल खिले हैं, जिसकी सीमा संख्या नहीं है।

यमक अलंकार का एक उदाहरण 'कंसबध' खण्ड से देखिए-

रामेसे गति भज मोर मति।
रामेसे गति रामेसे गति।। (गोस्वामी 1989:289)

अर्थात् कवि के अनुसार राम नाम भजो, क्योंकि उद्धार का उपाय राम नाम ही है।

श्लेष अलंकार का एक उदाहरण 'कृष्णलीला माला' खण्ड से-

पाइलेक वर यत गोपबाला। (गोस्वामी 1989:419)

अर्थात् जितनी भी गोपियाँ थी सभी ने वर के रूप में कृष्ण को पा लिया। यहाँ वर शब्द दो अर्थों का द्योतक है, एक पति और दूसरा आशीर्वाद।

3.2.2.2.2. अर्थालंकारः

उपमा, रूपक, भ्रांतिमान, उत्प्रेक्षा, निदर्शना, अतिशयोक्ति, उल्लेख आदि भिन्न अर्थालंकारों का प्रयोग शंकरदेव की कीर्तन-घोषा में द्रष्टव्य हैं। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं-

उपमा अलंकार का एक उदाहरण 'ध्यान वर्णन' खण्ड से देखिए-

कमल लोचन मुख प्रसन्न।
मुकुतार शारी-सम दशन ।। (गोस्वामी 1989:189)

अर्थात् यहाँ कृष्ण का रूप वर्णन करते हुए शंकरदेव कहते हैं कि कृष्ण के नेत्र कमल सदृश हैं, मुख में हँसी विराजमान है तथा उनकी दंत पंक्तियाँ एक समान मोतियों की माला की तरह है।

रूपक अलंकार का एक उदाहरण 'शिशुलीला' खण्ड से देखिए-

कंसर पांचनि पाइ यत दैत्य आसे।
तुमि अगणित ये‌न पुरि मरे जासे।। (गोस्वामी 1989:163)

अर्थात् कंस का आदेश पाकर सभी असुर कृष्ण को मारने आ गए, पर कृष्ण ने उन सभी को मार गिराया।

शंकरदेव रचित कीर्तन-घोषा में ऐसे स्वोभावोक्ति युक्त स्वभाव-सुंदर पदों की प्रचुरता उल्लेखनीय है। 'हरमोहन' खण्ड का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

पाचे त्रिनयन   दिव्य उपवन

देखिलंत बिद्यमान।

फल फुल धरि   जक मक करि

आछे जत वृक्षमान।।

शिरिष सेउती   तमाल मालती

लवंग बागी गुलाल।

करबीर बक   कांचन चम्पक

फुल भरे भांगे डाल।। (गोस्वामी 1989:127)

अर्थात् श्रीहरि विष्णु के अवतार मोहिनी को खोजते हुए महादेव ने एक दिव्य उपवन में प्रवेश किया, जहाँ वृक्ष फल-फूलों से चमक रहे थे। शिरीष, सेउती, तमाल,मालती,लवंग, बागी, गुलाब, करबी, बक, कंचन, चंपक आदि फूल डाल भर-भरकर लदे हुए हैं।

3.2.2.3. प्रतीकात्मकताः

महापुरुष शंकरदेव ने तत्कालीन समाज में प्रमुखतः भक्ति प्रचार के लिए 'कीर्तन-घोषा' की रचना की थी। साहित्यिकता की दृष्टि से अन्यतम कृति कीर्तन-घोषा में प्रतीक का सुंदर प्रयोग हुआ है।

असमीया विद्वान डॉ. प्रह्लाद कुमार बरुवा की एक उक्ति यहाँ उल्लेख्य है-

निराकार ब्रह्मक साकार रूपत अबतार रूप दिब लगा होवा बाबे अवतारबोर प्रतीकधर्मी हइ उठिल आरु लगते अवतारबोर रहस्यमयतार सइतेऊ युक्त है परिल (बरकाकटी 2014: 255)।

डॉ. बरुवा के मतानुसार निराकार ब्रह्म को साकार रूप देने पर अवतार प्रतीकधर्मी हो उठता है। कीर्तन-घोषा में भी अवतारवाद के चित्रण में प्रतीकात्मकता निश्चय ही है। इस बात की पुष्टि करने के लिए हम कीर्तन-घोषा में निहित कालि-दमन खण्ड को देख सकते है। कालि-दमन खण्ड में कृष्ण के दोहरे चरित्रों का अत्यंत सुंदर चित्रण किया गया है। एक तो साधारण मनुष्य रूप और दूसरा मनुष्य रूप के अंतराल में स्वयं भगवान का रूप। पापी तथा दुष्ट कालि नाग कृष्ण की वास्तविकता को न जानकर अपनी पूँछ से कृष्ण के शरीर को मेढ़ लेता है। कृष्ण भी साधारण मानव शिशु की भाँति विष के कारण अचेतन होने का भाव दिखाते हैं। फिर-

जगत आधार तोमार भिरे।
नाके मुखे सितो छादे रूधिरे।।
स्वामी मरे देखि नागिनी जाके।
शिशु आग करि आसिला शोके।।
परिल भूमित कृष्णर आगे।
करिया तुति स्वामी दान मागे।। (गोस्वामी 1989:193)

अर्थात् हे जगत के सृष्टकर्ता! तुम्हारे वज़न से दुष्ट कालि नाग के नाक और मुख से रक्त क्षय होने लगा। अपने स्वामी कालि नाग को मरता देख नागिनें (स्त्रियाँ) अपने बच्चों (सपोलों) को कृष्ण के सम्मुख रखकर शोक करने लगीं, उनके आगे पति के प्राण भिक्षा माँगने लगीं।

इस प्रकार अवतारी कृष्ण ने क्षण में कालि नाग के बंधन से अपने को मुक्त कर उसका सर्वनाश करने लगे। दुरावस्था देख कालि नाग की पत्नियाँ अपने पति के प्राणों की भिक्षा माँगने लगी। इस सम्बंध में असमीया समीक्षक डॉ.सत्येन्द्रनाथ शर्मा का कथन है-

कालिय नाग अहंकार, क्रुरता, दर्प आदिर प्रतीक। एइ प्रवृत्तिबोर सहस्र फणा तुलि जगतत अशांतिर प्रलय धुमुहार सृष्टि करे आरु इ हरिभक्तिर प्रधान अंतराय। येतियालैके क्रुर भावक मनर परा निर्वासन् दिया नायाय तेतियालैके शांति आरू भक्तिर अनुकूल परिवेश सृष्टि नहय। (बायन 2014:287)

अर्थात् प्रस्तुत खण्ड में वर्णित कालि जो एक नाग है, वह दरसल अहंकार, क्रूरता, दर्प का प्रतीक है। प्रकृतार्थ में यही प्रवृत्तियाँ जगत में अशांति के मूल कारक होती हैं, जिसके उपशम का उपाय केवल हरिभक्ति ही है। जब तक क्रूर भावों को मन से त्यागा नहीं जाता, तब तक शांति और भक्ति का वातावरण उत्पन्न नहीं हो सकता।

इस प्रकार कीर्तन-घोषा में वर्णित अवतारवाद के अंतराल में प्रतीकात्मकता निश्चित रूप में विद्यमान है।

3.2.2.4. छंद योजनाः

छंद योजना में चातुर्य के कारण ही असमीया विद्वान डॉ. महेन्द्र बरा ने शंकरदेव को 'छंदगुरु' (बायन, 2014:200) नाम से अभिहित किया है। कीर्तन-घोषा में कूल छह प्रकारों के छंदों का प्रयोग मिलता है- पद या पयार, दुलड़ी, छवि, एकावली या झुना, झुमुरि और दिगक्षरा छंद। भावानुरूप तथा अत्यन्त श्रुतिमधुर छंद योजना के कारण शंकरदेव की कीर्तन-घोषा लोकमानस के अंतर्मन को प्रभावित करती है। कीर्तन-घोषा की छंद योजना की एक अन्यतम विशेषता है- इसका लालित्य। जिस कारण यह अद्वितीय रचना बन गई। कीर्तन-घोषा में चित्रित पद या पयार छंद योजना का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

कृष्णरूपे दैबकीत/भैला अबतार।
शंखेचक्र गदा पद्म/करत तोमार। (भकत 2007:29)

अर्थात् कृष्ण रूप में देवकी के गर्भ में मानवातर लिया। प्रभु तुम वे ही हो जो हाथों में शंख, चक्र, गदा और कमल धारण करते हैं।

3.2.2.5. संगीतात्मकताः

संगीतात्मकता कीर्तन-घोषा की लोकप्रियता की अन्यतम विशेषता या गुण है। असम के बुज़ुर्ग हों या युवा, स्त्री हो या पुरुष एवं धनवान हो या निर्धन सभी असमीया को कीर्तन-घोषा का अंततः एक पद

गाना तो आता ही है। नवधा भक्ति से सम्पृक्त कीर्तन-घोषा में शंकरदेव ने श्रवण पर अधिक महत्त्व देते हुए सत्रों तथा नामघरों में नाम-प्रसंग की उपयोगिता की दृष्टि से सांगीतिक गुणों से कीर्तन-घोषा को श्रुतिसुखद रूप में जनमानस को भेंट की। वर्तमान समय में भी कीर्तन-घोषा पाठक और श्रोता दोनों के लिए आकर्षणीय रहा है। संगीतात्मकता की दृष्टि से असमीया ग्राम्य जीवन पर इसका गंभीर प्रभाव पड़ा है। असमीया समाज में प्रचलित भिन्न प्रकार के गीतों जैसे-हुँचरि, बियानाम, आइनाम, बिहुगीत, लोकगीत, लोकनृत्य आदि में कीर्तन के घोषा पदों का प्रयोग किया जाता है।

3.3 निष्कर्षः

महाकवि विद्यापति जनभाषा मैथिली में जो पद समय-समय पर गाते रहे, उसी का संग्रहीत रूप पदावली है। जीवनकाल में ही विद्यापति को ख्याति तथा लोकप्रियता भरपूर मात्रा में मिली, जिसका प्रमुख श्रेय उनकी एकमात्र अक्षय कृति पदावली है। पदावली के पदों का संकलन कार्य अब तक अनेक विद्वानों तथा संकलनकर्ताओं द्वारा हो चुका है। कुछ प्राचीन पदावलियों का आधार विद्यापति की पदावली के संपादन कार्य में विशेष महत्त्व रखता है। जहाँ तक पदावली के पदों की संख्या का प्रश्न है, उसका निश्चित उत्तर दे पाना दुरूह कार्य है। ग्रियर्सन के बाद डॉ. नगेन्द्रनाथ गुप्त ने विद्यापति की पदावली 935 पदों की संख्या में प्रकाशित किया। गुप्त के बाद सबसे प्रामाणिक खगेन्द्रनाथ मिश्र और बिमानबिहारी मजुमदार ने 939 पद प्रकाशित किए। इसमें गुप्तजी के 203 पद को छोड़कर 207 नये पद मिश्र-मजुमदार ने जोड़े। वैसे गुप्त मान्य 935 पदों के साथ यदि मिश्र-मजुमदार के 207 नये पद जोड़े जाएँ तो इसकी संख्या 1142 होती है। बिहार राष्ट्र परिषद द्वारा तीन खण्डों में विद्यापति पदावली का प्रकाशन योजना एक सफल तथा उल्लेखनीय बात है, जिनमें दो खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इस आधार पर भी पदावली की संख्या लगभग 1142 ही ठहरती हैं। कथ्य की दृष्टि से अध्ययन विवेचन करने पर हमें विद्यापति की पदावली में एकसूत्रता नहीं मिलती। राजकवि तथा राजसभासद कवि विद्यापति राजदरबार के विलासितापूर्ण वातावरण के साथ-साथ युगीन परिस्थितियों से भी प्रभावित थे। युगप्रेरित संघर्षों और परस्पर विरोधी मान्यताओं के प्रचलन के कारण

विद्यापति के व्यक्तित्व में जो परस्पर विरोधी भावनाओं का एकत्रीकरण मिलता है, वह उनके साहित्य में भी दृष्टिगोचर होता हैं। विद्यापति की पदावली मुक्तक रचना है, तथ्य की दृष्टि से इसे मूलतः तीन भागों में बाँटा जा सकता हैं-भक्ति विषयक, शृंगार विषयक और विविध विषयक। पदावली के भक्ति विषयक पदों में अन्यान्य देव-देवियों की वंदना, स्तुति, प्रार्थना, नचारियाँ तथा विनय के पद आते हैं। शृंगार के शिरोमणि विद्यापति ने अपनी पदावली में शृंगार का सर्वांगपूर्ण चित्रण किया है और इसके अतिरिक्त विविध विषयक पदों के अंतर्गत प्रहेलिका, युद्ध, कुट इत्यादि का चित्रण किया हैं। शिल्प की दृष्टि से अध्ययन विवेचन करने पर हम कह सकते हैं कि विलक्षण प्रतिभा के धनी विद्यापति ने चाहे उत्कृष्ट शब्दविन्यास या भाषा की दृष्टि से हो, या अलंकार योजना या भावानुकूल छंद योजना या प्रसंगानुकूल प्रतीक योजना या संगीतात्मकता हो, सभी दृष्टियों से उच्चकोटि की रचना साबित होती है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी तथा नववैष्णव धर्म के प्रवर्तक प्रचारक शंकरदेव की अक्षय कृति है-कीर्तन-घोषा। एकशरण हरिनाम धर्म प्रचार हेतु समय-समय पर शंकरदेव ने जनभाषा असमीया में जिन घोषा गीतों की रचना की, उन्हीं का संकलित रूप कीर्तन-घोषा है। शंकरदेव के देहावसान के बाद उनके प्रिय शिष्य माधवदेव ने उनके भांजे रामचरण ठाकुर के द्वारा कीर्तन-घोषा के संकलन कार्य को सम्पन्न किया। कीर्तन-घोषा को भक्तसमाज के साथ ही साहित्य प्रेमियों के मध्य पहली बार सन् 1876 ई. में हरिविलास आगरवाला ने सम्पादित कर प्रकाशित किया। उनके बाद कई संपादकों तथा संघों द्वारा कीर्तन-घोषा का संपादन कार्य हो चुका है। कथ्य की दृष्टि से कीर्तन-घोषा का अध्ययन विवेचन कर हम यह कह सकते हैं कि प्रस्तुत कृति मूलतः कथात्मक भक्ति काव्य है। कीर्तन-घोषा में कुल 30 खण्ड हैं और इसके प्रत्येक खण्ड का अपना-अपना कथ्य हैं। 30 खण्डों के अंतर्गत 195 कीर्तन हैं। शंकरदेव ने कीर्तन-घोषा में 'कृष्णंतु भगवान स्वयम' की प्रतिष्ठा कर कलिकाल में नाम धर्म को ही युग धर्म और हरि नाम को सभी पापों से मुक्ति का उपाय बताया है। कथ्य या विषयवस्तु की दृष्टि से कीर्तन-घोषा को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैं-लीला प्रधान प्रार्थना विषयक, लीलाहीन प्रार्थना विषयक और अन्य कथा या तीर्थ विषयक। प्रस्तुत कृति

में अवतार तत्व, वेदांत-दर्शन, दास्य-भाव, सत्संग महिमा, माया से उद्धार हेतु भक्ति की प्रयोजनीयता, भगवान का भक्तवत्सल रूप, शिशु कृष्ण की बाल-लीला, अजामिल जैसे पापी का उद्धार इत्यादि विषय निहित हैं। शिल्प की दृष्टि से भी 'कीर्तन-घोषा' शंकरदेव की अक्षय कृति है। शंकरदेव की सर्वाधिक लोकप्रिय कृति कीर्तन-घोषा साहित्यिक दृष्टि से भी अन्यतम है। उत्कृष्ट भाषा तथा शब्द विन्यास, सटीक अलंकार योजना, सफल प्रतीकात्मकता, भावानुकूल छंद योजना तथा संगीतात्मकता आदि सभी दृष्टियों से कीर्तन-घोषा की रचना उत्कृष्ट रूप में हुई है।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि विद्यापति की पदावली और शंकरदेव की कीर्तन-घोषा कथ्य और शिल्प उभय पक्ष की दृष्टि से उत्कृष्ट रचनाएँ हैं।

संदर्भ-ग्रंथसूचीः

असमीया

गोस्वामी, यतींद्रनाथ. *कीर्तन-घोषा आरु नाम-घोषा*. प्रथम. गुवाहाटीः ज्योति प्रकाशन. 1989.

गोहाँइ, हीरेन. *शंकरदेव संदर्शन*. प्रथम. गुवाहाटीः शांति प्रकाशन. 2013

बरकाकटी, संजीव कुमार (संपा). *युगश्रष्टा श्रीमंत शंकरदेव माधवदेव*. गुवाहाटीः लावण्य प्रकाशन. 2014.

बायन, भवजित. *सर्वभारतीय भक्ति आंदोलन आरु शंकरदेवर कीर्तन-घोषा*. प्रथम. गुवाहाटीः पाहि प्रकाशन. 2014.

भकत, द्विजेंद्रनाथ. *कीर्तन एक समीक्षात्मक आलेचना*. तृतीय. गुवाहाटीः चंद्र प्रकाशन. 2007.

मजुमदार, तिलकचंद्र. *श्रीमंत शंकरदेव साहित्य-संस्कृतिर जिलिंगनि*. प्रथम. गुवाहाटीः बनलता प्रकाशन. 2014.

हिन्दी

कपूर. शुभकार. *विद्यापति की पदावली*. प्रथम. लखनऊः भारती प्रकाशन. 1968.

दीक्षित, आनंदप्रकाश (संपा). *विद्यापति पदावली*. साहित्य प्रकाशन मंदिर. ग्वालियर.

बेनीपुरी, रामवृक्ष. *विद्यापति पदावली*. पंचम. इलाहाबादः लोकभारती प्रकाशन. 2011.